विलुप्त होती पुस्तक संस्कृति

किरण बाला
मन्दसौर (म.प्र.)

एक समय था जबकि पुस्तकें पढ़ना इंसान की रूचि में शुमार था। लोग अपनी रूचि के मुताबिक कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता संग्रह और अन्य विधाओं की पुस्तकें खरीदते और पढ़ते थे। लेकिन आज देश से पुस्तक संस्कृति नष्ट होती जा रही है। यह एक चिंतनीय बात है।

पुस्तकें ज्ञान का भण्डार होती हैं, इसमें किंचित संदेह नहीं। आज ज्ञान के लिए इन्हें कौन पढ़ता है ? पुस्तकें पढ़ना लोगों के लिए एक उबाऊ काम है। यह इंटरनेट का युग है। जब सारी सामग्री इंटरनेट पर मौजूद हो, तो कौन पुस्तकें खरीदे और उन्हें पढ़े ? नई पीढ़ी तो पुस्तकों से दूर होती जा रही है।

अब से कुछ दशक पहले तक लोग पुस्तकें खरीदते और पढ़ते थे। उनकी अपनी निजी लाइब्रेरी होती थी। वे अपनी लाइब्रेरी को समृद्ध बनाने में जुटे रहते थे। लेकिन आज कितनों के यहां अपनी निजी लाइब्रेरी है ?

निजी लाइब्रेरी की बात तो छोड़िए, पब्लिक लाइब्रेरियों में भी कितने लोग जाते हैं, उसके सदस्य बनते हैं और वहां से पुस्तकें इश्यू कराते हैं ? अधिकांश लाइब्रेरियों में पुस्तकें धूल खाती रहती हैं, और उनका रखरखाव महंगा पड़ने लगा है। जब पाठक नहीं, सदस्य नहीं, तो नई पुस्तकें खरीदने में भी कोताही बरती जाती है। सार्वजनिक पुस्तकालयों का बजट भी कम होने लगा है।

पुस्तकें पढ़ना एक अच्छी आदत है। अच्छी और प्रेरक पुस्तकें पढ़ने से न केवल ज्ञानार्जन होता है अपितु अच्छे संस्कार भी पनपते हैं। जो इंसान को एक आदर्श नागरिक बनाते हैं।

पुस्तकें पढ़ने से याददाश्त बढ़ती है, फिर चाहे वे पाठ्य पुस्तकें हों या इतर। इससे घटनाओं के क्रम को याद रखने में मदद मिलती है। एक बार कोई उपन्यास या कहानी पढ़ने के बाद पाठक उसे हूबहू भले ही न सुना पाए पर उसका सार या उसे संक्षेप में अवश्य बता सकता है। हां, जो पुस्तकें रूचिकर या आपके पसंदीदा होती हैं, उनकी सामग्री जल्दी मस्तिष्क में बैठ जाती है और लंबे समय तक बनी रहती है। पाठ्य पुस्तकों को भी रोजाना पढ़ने से उनकी सामग्री याद हो जाती है जो कि विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होती है।

जब आप किसी पुस्तक को पढ़ते हैं, तो उसमें खो जाते हैं। यानि आपकी एकाग्रता बढ़ती है। कुछ पुस्तकें तो ऐसी होती हैं जिन्हें आप बिना किसी अंतराल के एक सांस में पढ़ना चाहते हैं या उसकी श्रृंखला टूटने देना नहीं चाहते।

पुस्तकें पढ़ने से आपका शब्दकोष बढ़ता है। पुस्तकों में नए नए शब्द का प्रयोग होता है, जिन्हें आपने पहले कभी देखा, पढ़ा या सुना नहीं होता है। आप उसका अर्थ खोजने लग जाते हैं। इससे उसमें प्रयुक्त शब्दों का इस्तेमाल आप भी करने लगते हैं।

कुछ पुस्तकें ऐसी हैं जिसका अंत पाठक पर छोड़ दिया जाता है। इससे पाठक के सोचने की शक्ति बढ़ती है।

पुस्तकें मनुष्य की दिमागी खुराक होती है। भोजन करने से पेट की भूख शांत होती है लेकिन पुस्तकें पढ़ने से मस्तिष्क की भूख शांत होती है, जिससे मस्तिष्क की कार्यक्षमता भी बढ़ती है। इससे व्यक्ति मानसिक रूप से स्वस्थ्य और प्रसन्न रहता है।

हमें अपने भीतर पुस्तकें पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित करना चाहिए। रोजाना कोई न कोई पुस्तक या उसका कोई भाग पढ़ें। फिर देखिए इसका लाभ। समय की कमी तो एक बहाना है। जब आप कम्प्यूटर, लेपटॉप, मोबाइल, वाट्सएप पर घंटों समय गुजार सकते हैं, तो क्या घंटा–आधा घंटा पुस्तक पढ़ने में नहीं दे सकते ? यदि पुस्तकें पढ़ने की ठान लें, तो आप कितने ही व्यस्त क्यों न हो, समय निकाल ही लेंगे।

पुस्तकें इंसान को कल्पनाशील बनाती हैं। इससे उसकी सोच का दायरा बढ़ता है। विचारों में परिपक्वता आती है। उसकी बुद्धि और ज्ञान विकसित होते है। जीवन में आगे बढ़ने के लिए पुस्तकों से दोस्ती करना नितांत आवश्यक है।

साहित्य समाज का दर्पण होता है। इसमें उसकी छवि दिखाई देती है। साहित्यिक पुस्तकें पढ़ने का हमारे जीवन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे हमारे चारित्रिक मूल्यों का विकास होता है। नैतिक मूल्यों का विकास करने वाली पुस्तकों को प्राथमिकता देनी चाहिए।

एक समय वह भी था जब पुस्तकें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खरीदी और पढ़ी जाती थीं। ख्याति प्राप्त भारतीय लेखकों की पुस्तकें विदेशों में खूब पढ़ी जाती थीं। इसी प्रकार, प्रतिष्ठित विदेशी लेखकों की पुस्तकें भारत में काफी लोग खरीदते थे और पढ़ते थे। इन्हें पढ़ने से पाठकों को आनन्द की अनुभूति होती थी। और आज... । न देशी लेखकों की पुस्तकों की कोई पूछ परख है और न ही विदेशी। दोनों की पुस्तकें ठंडे बस्ते में बंद हैं।

पहले जब पुस्तक संस्कृति चरम सीमा पर थी, लोग पुस्तक पढ़कर उसे आत्मसात करते थे। उससे कुछ सीखते थे तथा दूसरों को भी सिखाते थे। लोग पुस्तक पढ़कर उस पर चिंतन करते थे। यह चिंतन पुस्तक के हर पहलू पर होता था। इससे व्यक्ति का मानसिक विकास होता था।

पुस्तक पढ़ना भी एक आदत है। जिन्हें इसकी आदत पड़ी हुई है, पुस्तक पढ़े बगैर उन्हें नींद नहीं आती, कुछ तो रात को पुस्तक पढ़ते–पढ़ते ही सोते हैं। किसी दिन यदि उन्हें पुस्तक पढ़ने का मौका न मिले, तो वे बैचेन हो जाते हैं। क्योंकि पुस्तकें पढ़ना उनकी नियमित दिनचर्या में शामिल है।

पहले एक भाषा में लिखी गई पुस्तकें कई भाषाओं में अनुवादित होकर छपती थीं, ताकि हर भाषा के पाठक उसे पढ़ सकें, लेकिन आज स्थिति यह है कि जब अपनी ही भाषा की पुस्तकें पढ़ने वाले नहीं हैं तो अनुवादित पुस्तकें कौन पढ़ेगा ?

एक समय वह भी था जब महिलाओं में पुस्तकें पढ़ने का जुनून सवार था। तब महिलाएं कामकाजी नहीं थीं। घर में फुर्सत के क्षणों में वे बड़े मजे से पुस्तकें पढ़ती थीं। लेकिन आज वे कामकाजी हो गई हैं। घर और ऑफिस दोनों जगह की जिम्मेदारी निभाने से उनके पास इतना समय ही नहीं बचता कि वे पुस्तकें पढ़ें। जो समय बचता भी है उसे वे मोबाइल, वाट्सएप आदि में लगाती हैं। पुस्तक पढ़ने से कहीं अधिक मजा उन्हें इंटरनेट पर आने लगा है।

मुझे याद है कि हमारी मां 80–85 वर्ष की आयु में भी पुस्तकें पढ़ती थी। उपन्यास पढ़ने का उन्हें बेहद शौक था। हम उनके लिए पुस्तकें खरीदकर या लाइब्रेरी से इश्यू कराकर लाते थे। इतनी आयु में भी उनमें उपन्यास पढ़ने का जज्बा सचमुच कमाल का था। कभी कभी तो एक ही

दिन में पूरा उपन्यास पढ़कर हमें अचंभित कर देती थी। आज कितने बड़े बुजुर्गों के हाथों में पुस्तकें होती हैं?

कभी कहानी किस्सों की पुस्तकें खूब पढ़ी जाती थीं। धार्मिक पुस्तकों का भी खास चलन था। घर की बड़ी बुढ़ियां अपने नाती–पोतों को परिकथाएं सुनाती थीं। बच्चे भी बड़े मजे से उन्हें सुनते थे। धार्मिक पुस्तकों के प्रसंग बच्चे बड़े रूचिपूर्वक सुनते थे। लेकिन आज यह संस्कृति लुप्त हो गई है।

कुछ समय पूर्व की बात करें, तो बच्चों में पुस्तकें पढ़ने का शौक पैदा करने के लिए मां बाप उन्हें बाल पत्रिकाएं लाकर देते थे। इसमें चंपक, नंदन, पराग, चंदामामा और कॉमिक्स हुआ करते थे। चाचा चौधरी के कॉमिक्स तो बच्चे बड़े ध्यान से पढ़ते थे। इसके अलावा, जातक कथाएं, बेताल बत्तीसी, आदि पुस्तकों का भी बच्चों को शौक था। लेकिन आज कितने घर परिवारों में बाल पत्रिकाएं या बाल साहित्य पहुंचता है ? मां बाप इसे फिजूलखर्ची समझते हैं। नतीजतन बच्चों में पुस्तक पढ़ने का माहौल ही नहीं बचा है। जब वे किशोर, युवा होते हैं तो उनकी रूचि अन्य बातों में हो जाती है। पुस्तक संस्कृति को वे तिलांजली दे चुके होते हैं।

हमने अपने पुस्तक प्रेम की वजह से हमारे एक मित्र को उनके जन्मदिन पर एक अच्छी सी पुस्तक गिफ्ट की थी। जब उनका अगला जन्मदिन आया और हमने उन्हें पुनः दूसरी पुस्तक भेंट की, तो उन्होंने पहले वाली पुस्तक लाकर हमें बताया कि उसकी तो अभी पैकिंग तक नहीं खुली है। हमें बड़ा अफसोस हुआ। सामने वाले ने हमारी भावनाओं की कद्र नहीं की। हालांकि हम जो पुस्तक साथ ले गए थे, उसे उन्हें भेंट कर दी। लेकिन उसके बाद उन्हें पुस्तक भेंट करने से तौबा कर लिया।

अब से कुछ दशक पहले तक जब दो पढ़े लिखे लोग आपस में मिलकर बतियाते थे तो उनकी चर्चा का विषय पुस्तकें हुआ करती थीं। वे एक दूसरे से पूछते थे कि अमुक पुस्तक पढ़ी या नहीं ? यदि सामने वाले ने नहीं पढ़ी होती तो उसे पुस्तक की खुबियां बताते थे। तब नई–नई पुस्तकों के प्रति लोगों में जिज्ञासाएं थीं। लेकिन आज जब भी हम किसी से मिलते हैं, तो क्या पुस्तकों के बारे में चर्चा करते हैं ?

पहले पुस्तक पढ़ने में लोगों को खुशी मिलती थी। लेकिन आज पुस्तकें तनाव का कारण बनने लगी हैं। हमारे एक लेखक मित्र की पुस्तक का विमोचन होने पर उन्होंने अपने कई शुभचिंतकों को वह भेंट की। भेंट करने का उद्देश्य था कि पाठक उसे पढ़े तथा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करें। आपको यकीन नहीं होगा कि उन्होंने जिन 100 लोगों को ये पुस्तक भेंट की थीं, उनमें से मात्र 2 लोगों ने उसे पढ़ा और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की।

पहले कुछ लोग तकनीकी पुस्तकें पढ़ते थे, लेकिन आज ये पुस्तकें भी ग्रंथालयों की शोभा बढ़ा रही हैं। संदर्भ ग्रंथ, जिनका उपयोग पहले करते थे, आज केवल शोधकर्ताओं के उपयोग की वस्तु बनकर रह गया है।

आखिर पुस्तक संस्कृति नष्ट क्यों हो रही है? इसके पीछे सबसे बड़ा कारण पुस्तकों की कीमतें अधिक होना है। आज कोई साधारण पुस्तक भी 300–400 रूपए से कम नहीं होती। ख्याति प्राप्त लेखकों और प्रकाशकों की पुस्तकों की कीमतें तो इतनी अधिक हैं कि एक आम पाठक खरीदकर पढ़ ही नहीं सकता। ये पुस्तकें केवल लाइब्रेरियों में ही खरीदी जाती हैं।

पुस्तक प्रकाशन और उसका विक्रय आज आसान बात नहीं है। पुस्तक जैसे तैसे छप भी जाए, तो उसके खरीददार नहीं मिलते। ऐसे में वह लेखक या प्रकाशक के माथे पड़ जाती है और पुस्तक प्रकाशन लाभ की बजाय घाटे का सौदा बन जाता है।

ई–बुक्स और ई–जर्नल्स के आगमन से कागज पर छपी पुस्तकों की बिक्री प्रभावित हुई है। जब पुस्तकें बिकेंगी नहीं, तो प्रकाशक उसे प्रकाशित क्यों करें? जो पाठक पहले प्रकाशित पुस्तकों को पढ़ने में रूचि रखते थे, वे अब ई–बुक्स के पाठक बन गए हैं।

लेखक बनना एक गौरव का प्रतीक था। प्रतिष्ठित लेखकों, साहित्यकारों का समाज में एक विशिष्ट दर्जा और मान सम्मान था। उनकी पूछ–परख होती थी लेकिन आज लेखन को दोयम दर्जे का पेशा माना जाता है। इससे नए लेखक, नई प्रतिभा कुंठित हो रहे हैं।

यह भी एक विडम्बना है कि जहां परिवार में रहकर नई पीढ़ी संस्कारों से परिचित होती है और उसका अनुसरण करती है, वहीं वह पुस्तक संस्कृति को अपनाने से कतराती है। किसी परिवार में दादा–दादी पुस्तकें पढ़ते हों तो जरूरी नहीं कि उनकी अपनी संतान, नाती–पोते आदि भी पुस्तक संस्कृति को अपनाए। उनकी अपनी दुनिया है, जिसमें पुस्तक संस्कृति का कोई स्थान नहीं।

आज बच्चे हों या युवा, पाठ्य पुस्तकों के अलावा अन्य कोई पुस्तक पढ़ना ही नहीं चाहते। वे भी क्या करें, पढ़ाई का बोझ ही इतना अधिक होता है कि पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त पुस्तकें पढ़ने का वे सोच भी नहीं सकते। पाठ्य पुस्तकें पढ़ते–पढ़ते ही वे इतना थक जाते हैं कि पूछो मत। ऊपर से अभिभावकों का दबाव। हर अभिभावक चाहता है कि उसकी संतान अपनी कक्षा में टॉप करे।

दरअसल, टीवी और इंटरनेट संस्कृति ने पुस्तक पढ़ने की प्रवृत्ति को समाप्त कर दिया। लोग अपना टाइम पास करने के लिए दिनभर अपने मोबाइल पर व्यस्त रहते हैं। इंटरनेट का इस्तेमाल कर अपना मनोरंजन करते हैं। रही सही कसर टेलीविजन ने पूरी कर दी। समाचारों के अलावा लोग अपना पसंदीदा सीरियल देखते हैं। पुस्तक पढ़ने में उनकी दिलचस्पी बची ही नहीं।

कुछ दशक पहले तक जब लोग ट्रेन में आरक्षण कराकर सफर करते थे तो वे कोई पुस्तक, उपन्यास, मैग्जीन आदि अपने साथ ले जाते थे ताकि लंबे सफर में वे बोर न हों। लेकिन क्या आज किसी भी रेलयात्री के हाथों में कोई पुस्तक नजर आती है ? पुस्तकों का स्थान मोबाइल संस्कृति ने ले लिया है।

एक समय वह भी था जब लोग अपनी जान से ज्यादा पुस्तकों की हिफाजत करते थे, तथा उन्हें सहेज कर रखते थे। उनके यहां पुरानी पुस्तकों का भंडार रहता था। इसे वे अपनी संस्कृति का प्रतीक मानते थे। लेकिन आज परिदृश्य बदल गया है। आज कितने घरों में पाठ्य पुस्तकों से इतर पुस्तकें हैं ? पाठ्य पुस्तकों को भी परीक्षा के बाद रद्दी में बेच दिया जाता है।

आज पुस्तक प्रकाशन एक चुनौती बन गया है। लेखक भी पीछे हटते नजर आ रहे हैं। आवश्यकता है पुस्तक संस्कृति को पुनर्जीवित करने की। इसके लिए जरूरी है कि पुस्तकें छोटी और रूचिकर हों। लंबे ग्रंथ ऊबाऊ होते हैं और उनका मूल्य भी बहुत अधिक होता है। यदि पुस्तकें कम मूल्य पर उपलब्ध हों, तो पाठक संख्या निश्चित तौर पर बढ़ सकती है।

पुस्तक संस्कृति को पुनः लाने के लिए जरूरी है कि समय समय पर पुस्तक मेले आयोजित किए जाएं। इनमें हर तरह की पुस्तक के प्रकाशक और लेखक उपस्थित हों, लोगों को

पुस्तकें खरीदने के लिए प्रेरित कर सकें। याद रहे, छपी हुई पुस्तकें पढ़ने का कोई विकल्प नहीं है।

पढ़ना–लिखना मानव की मूल प्रवृत्ति है। शैशव अवस्था समाप्त होते ही मां बाप अपने बच्चे को स्कूल में दाखिल कराते हैं ताकि वह वहां पुस्तकों से रूबरू हों। बच्चों की पुस्तकें आकर्षक, चित्रमय तथा बहुरंगी होती हैं, ताकि उनकी रूचि बनी रहे। धीरे–धीरे बच्चा पढ़ना सीख लेता है। इसके बाद शुरू होती है पाठ्य पुस्तकों की शुरूआत। ये उसके विद्यार्थी जीवन की शुरूआत होती है जो कि अध्ययन समाप्ति तक चलती रहती है। जब उसकी शिक्षा पूरी हो जाती, तभी वह पाठ्य पुस्तकों से मुक्ति पाता है। यानि स्कूली शिक्षा से शुरू हुआ पुस्तकों का संबंध विश्वविद्यालय स्तर तक अटूट रहता है।

जो विद्यार्थी पाठ्य पुस्तकों के अलावा अन्य पुस्तकों का भी अध्ययन करते हैं, नियमित रूप से पुस्तकालय जाते हैं, उनके व्यक्तित्व में इसकी छाप स्पष्ट रूप से झलकती है। जैसा कि साहित्यकार फ्रेंजज काफ्का ने कहा है, 'अच्छी पुस्तकें कुल्हाड़े की तरह अपने अंदर के बर्फ के दरिया को तोड़ देने की क्षमता रखती हैं।'

कुछ विद्यार्थी यह कहते हैं कि उनके पास इतना समय नहीं होता है कि लाइब्रेरी जाएं या पाठ्य पुस्तकों से इतर पुस्तकें पढ़ें। कैसी विडम्बना है कि उन्हें मोबाइल अथवा टीवी के लिए तो समय है लेकिन पुस्तकें और लाइब्रेरी के लिए नहीं। यह प्रवृत्ति उनके लिए ठीक नहीं। माना कि मोबाइल और टीवी भी जरूरी है, लेकिन उन्हें पुस्तकों पर हावी नहीं होने देना चाहिए।

मां–बाप को चाहिए कि बाल्यकाल से ही उनमें पुस्तकों के प्रति रूचि पैदा करें ताकि जब वे स्कूल–कॉलेजों में जाएं तो उनकी पढ़ने की यह प्रवृत्ति उस समय भी कायम रहे।

ऋषि तिरूवल्लुवर का कहना है कि पुस्तकें सुगंधित पुष्पों के समान हैं। वे जहां जाती हैं, अपने साथ मधुर सुगंध का आनन्द ले जाती हैं। उनका सभी जगह घर है और सभी देश उनके लिए स्वदेश हैं।'

पुस्तकें ऐसी चीज हैं जो इंसान की विचारधारा को बदल सकती हैं। उसे सोचने पर मजबूर कर सकती हैं तथा उसे सही दिशा प्रदान करती हैं।

पुस्तक की महत्ता कभी समाप्त नहीं होती। हर उम्र में उसकी जरूरत बनी रहती है। यदि हर पीढ़ी के लोग इसे न पढ़ें, तो इस पुस्तक संस्कृति को कौन जीवित रखेगा ? आगे आने वाली पीढ़ी को भी इससे परिचित कराने की जिम्मेदारी नई पीढ़ी की है।

स्कूल–कॉलेज के शिक्षक बच्चों और युवाओं का भविष्य गढ़ते हैं। उन्हें भी चाहिए कि वे अपने छात्रों का पुस्तक प्रेम जागृत करें। स्वयं भी पुस्तकें पढ़ें और छात्रों को भी इसके लिए प्रेरित करें। पुस्तक संस्कृति को जीवित रखने की अहम जिम्मेदारी शिक्षकों पर है ।

पुस्तक संस्कृति को पुनर्जीवित करने के लिए एक समग्र क्रांति की जरूरत है। इसकी शुरूआत हमें अपने घर परिवार से करनी होगी। बचपन से ही पुस्तक पढ़ने की आदत डालनी होगी। इसके लिए जरूरी है कि हम स्वयं पुस्तकें पढ़ें और दूसरों को पढ़ाएं।